शब्द–ब्रह्म
ISSN 2320 – 0871
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
17 अप्रैल 2014

भक्ति आन्दोलन और मीराँ

(विशेष:स्त्री-विमर्श)

सुश्री प्रेमवती
गुरु गोविन्द सिंह कालेज आफ कामर्स
दिल्ली विश्वविद्यालय,
नई दिल्ली, भारत

शोध संक्षेप

सभी भक्त कवियों के समान मीरांबाई भी मध्यकाल की उस सांस्कृतिक घटना की देन है, जिसे 'भक्ति आन्दोलन' के नाम से जाना जाता है। भक्ति-आन्दोलन में पुरुष भक्त संतो के समान स्त्री भक्तिनों की भी एक पूरी की पूरी काव्य-परम्परा मिलती है। इसी काव्य परम्परा का प्रतिनिधित्व मींराबाई करती दिखाई देती हैं। अपनी रचनात्मक चेतना और 'स्त्री-विमर्श' के प्रेरणास्रोत के रूप में आज भी उनका काव्य प्रासंगिक और महत्वपूर्ण है। प्रस्तुत शोध पत्र में इसी बिंदु पर विचार किया गया है।

प्रस्तावना

सभी भक्त कवि हमारी सांस्कृतिक धरोहर हैं। जिन्हें पीढ़ी दर पीढ़ी संजोकर रखना हमारा राष्ट्रीय कर्त्तव्य है। ये सभी भक्त कवि मध्यकाल की उस सांस्कृतिक घटना की देन हैं, जिसे भक्ति-आन्दोलन के नाम से जाना जाता है। पूरे भारत वर्ष में राष्ट्रीय स्तर पर दो ही आन्दोलन हुए हैं। एक मध्यकाल का भक्ति-आन्दोलन और दूसरा आधुनिक काल का 'स्वाधीनता आन्दोलन'। आचार्य शुक्ल ने भक्ति-काव्य को इसे इस्लाम प्रतिक्रिया के फलस्वरूप उत्पन्न माना1 वहीं दूसरी ओर आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इसे भारतीय चिन्ताधारा और धर्म साधना का स्वाभाविक विकास2 कहा लेकिन डॉ.रामविलास शर्मा ने भक्ति-आन्दोलन को 'लोक-जागरण' कह कर पुकारा3, यह 'लोक-जागरण साहित्य की भाषा संस्कृत में ही नहीं बल्कि समाज में भी कई स्तरों पर दिखाई देता है। मतलब संस्कृत के स्थान पर अब लोक भाषा में काव्य रचना होने लगी। पुरुष भक्तों के साथ ही एक बड़ी संख्या में स्त्री भक्त कवयित्रियों का भी जमाव भक्ति आन्दोलन में दिखाई है। इन स्त्री भक्तों का प्रतिनिधित्व करती मीरांबाई दिखाई देती है। इस संबंध में मैनेजर पाण्डेय ने लिखा हैः- "भक्ति आन्दोलन की एक बड़ी सांस्कृतिक उपलब्धि है- भारत के विभिन्न क्षेत्रों की जनता की मातृभाषाओं का रचनात्मक उत्थान और उनमें काव्य-रचना का अपूर्व विकास। दक्षिण के आलवार भक्तों से लेकर कश्मीर के लल्लद और असम के शंकर देव से हिन्दी के कबीर आदि तक देशभर के पुरुष और स्त्री भक्त कवि अपनी मातृभाषा के कवि थे। यह एक तरह से संस्कृत

के वर्चस्व से लोकभाषाओं की स्वतन्त्रता का आन्दोलन भी था, जिसके कारण लोक प्रतिभा की मुक्ति संभव हुई। इस मुक्ति के कारण ही भारतीय साहित्य के लम्बे इतिहास में कवि के रूप में प्रायः अनुपस्थित, अदृश्य और मौन दलित तथा स्त्रियों की रचनात्मक प्रतिभा का विस्फोट भक्ति आन्दोलन के काव्य में दिखाई देता है और साथ ही उनकी सहज तथा शक्तिशाली आत्माभिव्यक्ति सामने आती है।"4 इस प्रकार भक्ति आन्दोलन की क्रान्तिकारी चेतना स्त्रियों में अस्मिता और अस्तित्व बोध की चिंगारी को जन्म देती है।

मीरां और स्त्री-विमर्श

भक्ति आन्दोलन भारतीय स्त्रियों के लिए पहला आन्दोलन है जिसमें वे अपने आत्मानुभावों की अभिव्यक्ति अपनी ही लोक-भाषा में अभिव्यक्त करती हुई भक्ति-आन्दोलन के एक ही मंच पर सभी साथ दिखाई देती है। इस परम्परा की शुरूआत डॉ. रामविलास शर्मा ने भागवत से दिखाई है। आधुनिक भारतीय लोक-भाषाओं में स्त्रियों ने अपने काव्य-रचना की। जो किसी भी तरह से पुरुष संतों से कम नहीं है। तमिलनाडु की आण्डाल, कर्नाटक की अक्क महादेवी, हिन्दी प्रदेश की मीराँबाई और कश्मीर की लल्लद इसकी ज्वलन्त मिसाल हैं। इन सभी कवयित्रियों पर डॉ. रामविलास शर्मा ने स्वतन्त्र रूप से विचार भी किया है। भक्ति-आन्दोलन को डॉ.रामविलास शर्मा ने 'लोक-जागरण' कहा। उनके अनुसार भक्ति-आन्दोलन का स्वरूप इतना व्यापक था कि इसका प्रभाव धर्म, कला, संस्कृति पर नहीं बल्कि सामाजिक स्तर पर इसने ब्राह्मणों के वर्चस्व को, जाति-व्यवस्था को भी चुनौती दी इसलिए इसे बहुस्तरीय और बहुआयामी कहा जाता है।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपनी भक्ति काव्य संबंधी विवेचना में लोक और शास्त्र के द्वन्द्व को दिखाया है। जिसका आलोचनात्मक विकास हमें नामवर सिंह जी की भक्ति काव्य संबंधी आलोचना में दिखाई देता है। इन आलोचकों के अनुसार भक्ति-काल में मुख्य संघर्ष 'लोक' और 'शास्त्र' के बीच का संघर्ष है। जिसमें जीत लोक की होती है। सभी भक्त कवियों की रचनाओं में शास्त्र की कटु आलोचना की गई है। लेकिन मीराँ काव्य में शास्त्र को तो चुनौती दी गई है। साथ में लोक को भी उन्होंने अपना अंगूठा दिखा आगे बढ़ती गई हैं।

मैनेजर पाण्डेय ने लिखा है, "वस्तुतः स्त्रियों की पराधीनता और दमन के प्रसंग में शास्त्र उतना दमनकारी नहीं होता, जितना लोक होता है। एक स्त्री का जीना, मरना, मुस्कुराना, हँसना, रोना, प्रेम करना सब कुछ के प्रसंग में यह कहा जाता है कि ये ऐसा करेगी या वैसा करेगी तो लोग क्या कहेंगे ? इसी को लोक कहते हैं और पुरुषों ने यह मान्यता बना रखी है कि लोक-लाज ही स्त्री का आभूषण है, लेकिन मीरां कहती हैं- लोक-लाज कुलकानि जगत की दई बहाय जस पानी, अपने घर का परदा कर लो, मैं अबला बौरानी।"5

मध्यकाल में निम्न वर्ग और उच्च वर्ग में नारी की दशा एक समान थी। निम्न वर्ग की स्त्रियों पर शास्त्र उतना नहीं, जितना लोक हावी रहता था। लेकिन उच्च वर्ग की स्त्रियों को शास्त्र और लोक दोनों से ही अपमानित होना पड़ता था। साथ ही सामंतशाही परिवार की नारियों के लिए कड़े रीति-रिवाज, सती-प्रथा इत्यादि जैसी मान्यताएँ जिन्हें उन्हें अपने प्राण की आहूती देकर भी निभाना पड़ता था। लेकिन मीरां मध्यकाल में लगभग ऐसी संत भक्तिन है, जिन्होंने विवाह,

संस्कार, सती-प्रथा जैसी मान्यताओं को नहीं माना, साथ ही वह भक्ति के माध्यम से घर की चार-दीवारी के बाहर निकली, फिर वह दोबारा कभी घर नहीं आई। इसलिए मीरां को अपने जीवन में जितना संघर्ष अपने घर-परिवार, वालों के साथ करना पड़ा, उतना ही संघर्ष उन्हें बाहर भी करना पड़ा। कहा जाता है कि उन्हें किसी भी सम्प्रदाय ने सम्मिलित होने और उन्हें दीक्षित करने की स्वीकृति नहीं दी- "मीरां अपने कर्म और काव्य से शास्त्रमत और लोकमत दोनों को बेमानी बना देती हैं। वे अगर 'कुलकानि', 'घर का परदा' और 'लोक-लाज' का परित्याग करती हैं तो वल्लभ सम्प्रदाय में दीक्षित होने का आमंत्रण अस्वीकार कर संप्रदाय वालों के कोप का भाजन भी बनाती हैं। इसलिए उनकी राह अकेली है। वे लोक और शास्त्र, निर्गुण और सगुण दोनों संप्रदायों के लिए चुनौती है। दोनों संप्रदायों में स्त्री संबंधी अंधविश्वास-सी जो मान्यता व्याप्त है, उसका मुखर और क्रान्तिकारी उत्तर है मीरां का काव्य। मीरां का काव्य हिन्दी काव्य और उत्तर भारतीय समाज में नारी-स्वाधीनता संबंधी विमर्श का मंगलाचरण है।"6

इस प्रकार मीरा काव्य में जो संघर्ष या आत्मसंघर्ष और विद्रोह दिखाई देता है, उसका संबंध किसी न किसी तरह नारी अस्मिता की पहचान और नारी-मुक्ति की भावना से है। लेकिन आज समकालीन 'स्त्री-विमर्श' से मीरां काव्य किस प्रकार जुड़ता है। इसे भी समझना अति महत्वपूर्ण है। इस संबंध में विश्वनाथ त्रिपाठी जी ने लिखा है, "मीरांबाई नारी चेतना वाली कवयित्री नहीं है, फेमिनिष्ट नहीं है। यदि मीरां आज होती तो वे इसका विरोध करती, लेकिन मीरां नारी चेतना की प्रतीक तो है। स्त्री-विमर्श से मीरां का इतना ही सम्बन्ध है कि मीरां स्त्री थी और कोई सम्बन्ध नहीं है। मीरां तो स्त्रीत्व से मुक्त होना चाहती थी, जबकि नारीवादी उनको उस तरफ धकेलना चाहते हैं।"7

'स्त्री-विमर्श' में स्त्रियों की अपनी अस्मिता और अस्तित्व का बोध होना अतिआवश्यक है, जिसके बिना मुक्ति की लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती। 'स्त्री-विमर्श' में स्त्रियों की समस्याओं और अधिकारों के प्रति जो विमर्श होता है। उन अधिकारों और समस्याओं के प्रति जागरूकता मीरां काव्य में नहीं है। इसलिए मीरां काव्य को आज के 'स्त्री-विमर्श और 'स्त्री-वादिता' के साथ जोड़कर पढ़ना एक चुनौती पूर्ण काम है। वास्तव में मीरां की दृष्टि स्त्री या पुरुष पर है ही नहीं। विश्वनाथ त्रिपाठी के अनुसार मीरां-भक्ति में नये जेंडर का निर्माण होता दिखाई देता है। ईश्वर के दरबार में स्त्री-पुरुष के बिना लिंग भेद को प्रवेश कर सकते हैं। तभी राजशाही को मीरां के साधु-संगति में रहकर कीर्तन-भजन करने पर आपत्ति थी। अगर वह घर की चार दीवार के भीतर पूजा अर्चना करती तो भला किसी को क्या आपत्ति होती। इसलिए मीरां का काव्य-"अपनी स्वतन्त्र अस्मिता के लिए किया गया विद्रोह है, मीरां जैसा विद्रोह तो आज के युग में भी स्त्रियों द्वारा संभव नहीं है। मीरां का संघर्ष व्यक्ति-स्वातंत्रय के लिए है और इसकी राह में उठने वाली हर दीवार से वे टकराती है। मध्यकालीन सामाजिक व्यवस्था की अभेद्य दीवारों से मीरां की टकराहट की प्रतिध्वनि नही 'मीरां का काव्य' है। इस लड़ाई में हिन्दी की स्त्री-का व्यक्तित्व पहली बार झलकता है। मध्यकाल के उस परिवेश में जब कवि किसी सम्प्रदाय या मत से जुड़कर अपनी पहचान बना रहे थे, मीरां एक ऐसी स्त्री व्यक्तित्व है जो अपनी

स्वतन्त्र पहचान बनाती है। एक स्त्री के रूप में अपनी स्वतंत्र पहचान रखना, अपने जीवन का निर्णय स्वयं लेने का साहस, अपने लिए जीना, हर प्रकार के आग्रह एवं आडम्बर को तोड़ते हुए अपना स्वयं का व्यक्तित्व निर्मित करना पुरुष प्रधान सामंती समाज में ये कोई मामूली बात न थी। इसीलिए स्त्री-अस्मिता के पहले सशक्त स्वर के रूप में मीरां के काव्य को रेखांकित करना चाहिए।''8

इस प्रकार 'स्त्री-विमर्श' के रूप में मीरा-काव्य का महत्व इस बात में हैं मुक्ति की आकांक्षा को उन्होंने पराधीनों की आंखों में जीवित रखा। नई सदी में भी वह उनकी आंखों में जीवित है। उन्हें संघर्ष करने के लिए प्रेरणा, वैसी ही निर्भिकता और साहस प्रदान करती है।

निष्कर्ष

इसलिए आज के 'स्त्री-विमर्श' और स्त्रियों की स्थिति को समझने के लिए हिन्दी साहित्य में मीरां काव्य का योगदान इस बात में बहुत अधिक है कि उनको आज एक प्रेरणास्रोत के रूप में लिया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास
2. हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ. 15
3. रामविलास शर्मा, परम्परा का मूल्यांकन
4 बहुवचन पत्रिका, अंक-24, 4 जनवरी मार्च 2010, पृ. 46
5. कथा पत्रिका, सं. अनुज, पृ. 51, अंक 16 मई 2012
6. गोपेश्वर सिंह, साहित्य से संवाद, पृ. 23
7. कथा पत्रिका, सं. अनुज, पृ. 44
8. कथा पत्रिका, सं. अनुज, पृ. 184